के. एम. अब्दुल्ला कुन्ही और बी. एल. अब्दुल खादर

बनाम

भारत संघ व अन्य, कर्नाटक राज्य व अन्य

23 जनवरी, 1991

[बी. सी. राय, एम. एच. कनिया, के. जगन्नाथ शेट्टी, एल. एम. शर्मा और जे. एस. वर्मा, न्यायाधिपतिगण]

विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी निवारण अधिनियम, 1974-धारा 3,8,10 और 11 में निरुद्ध व्यक्ति के अभ्यावेदन पर विचार करने से पूर्व निरोध आदेश की पुष्टि-क्या वैध-सरकार द्वारा प्राप्त किया परंतु सलाहकार बोर्ड की रिपोर्ट प्राप्त करने के पश्चात उस पर विचार किया-क्या वैध है।

भारत का संविधान 1950: अनुच्छेद 22 (4) और (5)-निवारक निरोध-निरुद्ध व्यक्ति के अधिकार-क्या हैं?

इस न्यायालय की खंडपीठ ने वी. जे. जैन बनाम श्री प्रधान और अन्य, [1979] 4 एस. सी. सी. 401 में माना है कि हिरासत में लिए गए व्यक्ति के अभ्यावेदन पर निरोध प्राधिकरण द्वारा निरोध आदेश की पुष्टि से पहले जल्द से जल्द विचार किया जाना चाहिए। अभ्यावेदन पर विचार किए बिना निरोध आदेश की पुष्टि अमान्य होगी और अभ्यावेदन पर बाद में विचार करने पर पुष्टि के आदेश की अमान्यता को सुधारा नहीं जा

सकता है। ओम प्रकाश बहल बनाम भारत संघ, रिट संख्या संख्या 845 दिनांक 15.10.1979 के मामले में इस विचार को दोहराया गया था।

चूंकि उपरोक्त दृष्टिकोण पर पुनर्विचार की आवश्यकता थी, इसलिए हस्तगत एसएलपी और डब्ल्यूपी को एक संवैधानिक पीठ के समक्ष सुनवाई हेतु निर्देशित किया गया।

1 दिसंबर, 1988 को राजस्व खुफिया निदेशालय के अधिकारियों को जब यह जानकारी मिली कि प्रतिबंधित सोना याचिकाकर्ता संख्या 1 के कमरे में गुप्त रूप से छिपाया गया है तब स्वतंत्र गवाहों की उपस्थिति में कमरे की तलाशी ली गई। कमरे में एक और व्यक्ति भी मौजूद था। अधिकारियों ने उस कमरे में टेबल के ड्रॉवर से एक सैमसोनाइट पाउच और भारतीय मुद्राओं के कुछ बंडल बरामद किए। उक्त पाउच के अंदर 24 कैरट शुद्धता के पांच सोने के विदेशी मूल के बिस्कुट थे जिन्हें वजह सबूत जब्त किया गया था।

दिनांक 24 फरवरी, 1989 को राज्य सरकार द्वारा विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी निवारण अधिनियम, 1974 की धारा 3 (1) (iv) के तहत दो अलग-अलग निरोध आदेश पारित किए गए और याचिकाकर्ताओं को हिरासत में लिया गया और केंद्रीय जेल में रखा गया। 17 अप्रैल, 1989 को बंदियों ने सरकार को ज्ञापन दिया, जिस पर तुरंत विचार नहीं किया जा सका क्योंकि उन्हें अनुवाद और जानकारी की टिप्पणियों के संग्रह की

आवश्यकता थी। इस बीच, मामला सलाहकार बोर्ड को भेजा गया, जिसकी 20 अप्रैल, 1989 को हुई बैठक में बंदी के मामले पर विचार किया गया और रिपोर्ट की गई की याचिकाकर्ताओं को हिरासत मे लेने का पर्याप्त कारण था। 27 अप्रैल, 1989 को सरकार ने रिपोर्ट को स्वीकार कर लिया और हिरासत के आदेशों की पुष्टि की। 6 और 7 मई, 1989 को सरकार ने हिरासत में लिए गए लोगों के अभ्यावेदन को अस्वीकार कर दिया और उन्हें इसके बारे में सूचित किया गया।

निरोध आदेशों को उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका के माध्यम से चुनौती दी गई थी लेकिन उच्च न्यायालय ने इसे खारिज कर दिया।

इस न्यायालय में प्रस्तुत अपील और रिट याचिका में, मुख्य प्रश्न यह था कि क्या सलाहकार बोर्ड की रिपोर्ट को स्वीकार करने के पश्चात निरोध आदेश की पुष्टि मात्र इस आधार पर अमान्य हो जायेगी कि बंदी के अभ्यावेदन पर विचार नहीं किया गया था, और क्या अभ्यावेदन पर बाद में विचार करने पर उक्त अमान्यता को सुधारा नहीं जा सकता है

मामलों का निस्तारण करते हुए, न्यायालय, द्वारा अभिनिर्धारित किया

1 (क) नागरिकों की स्वतंत्रता के संबंध में न्यायालय तथ्यों एवं कानून की आवश्यकतओं की रक्षा करता है लेकिन न्यायालय बिना किसी सामग्री के किसी भी प्राधिकरण के खिलाफ कोई उपधारणा नहीं कर सकेगा [115 जी]

(ख) निरोध आदेश की पुष्टि के पश्चात भी सरकार उक्त आदेश को अभ्यावेदन पर विचार करने के पश्चात प्रतिसंहरित कर सकती है। [115 जी]

(ग) ऐसे भी मामले हो सकते हैं जहां सरकार को निरोध आदेश की पुष्टि के बाद ही अभ्यावेदन पर विचार करना पडे। [115 एच]

2 (क) दो संवैधानिक सुरक्षा उपाय हैंः अनुच्छेद 22 (4) तथा अनुच्छेद 22(5) अनुच्छेद 22 (4) के तहत यदि किसी निरुद्ध व्यक्ति को तीन महीने से अधिक समय तक हिरासत में रखे जाने योग्य माना जाता है, तो उसका मामला सलाहकार बोर्ड को भेजा जाएगा।तीन महीने की उक्त अवधि की समाप्ति से पूर्व बोर्ड को रिपोर्ट करनी होगी कि उसकी राय में ऐसे निरोध के लिए पर्याप्त कारण है। जब किसी व्यक्ति को अन्य किसी निवारक निरोध कानून के तहत पारित किए गए आदेश के अनुसरण में हिरासत में लिया जाता है, तो जितना जल्दी हो सके प्राधिकारी उसे आदेश पारित करने के आधारों को अवगत करायेगा तथा अविलंब उसे आदेश के खिलाफ अभ्यावेदन प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान करेगा।

2 (ख) अनुच्छेद 22 (5) के तहत बंदी के दो अधिकार हैं। (i) बंदी को जितनी जल्दी हो सके, उन आधारों के बारे में सूचित किया जायेगा जिन पर निरोध का आदेश आधारित है, यानी वे आधार जिससे निरोध प्राधिकारी को व्यक्तिपरक संतुष्टि मिली, और (ii) बंदी को निरोध के आदेश

के खिलाफ अभ्यावेदन प्रस्तुत करने का जल्द से जल्द अवसर उपलब्ध करवाया जायेगा। [109 ए]

3. सलाहकार बोर्ड का कार्य विशुद्ध रूप से सलाह देने का है उसकी रिपोर्ट के आधार पर सरकार बंदी को 03 माह से अधिक समय के लिये हिरासत में तभी रख सकेगी जब कि हिरासत आदेश गुण-दोष के आधार पर वैध हो तथा उक्त हिरासत से अन्यथा संविधान का उल्लंघन न हो। [108 एफ]

4 (क) अनुच्छेद 22(5) के तहत अभ्यावेदन प्रस्तुत करने बाबत दिया गया सवेंधानिक अधिकार वास्तव में अभ्यावेदन पर सम्यक रूप से विचार करने के अधिकार की गारंटी देता है। निरूद्ध व्यक्ति को अभ्यावेदन प्रस्तुत कराने का दायित्व व उक्त अभ्यावेदन पर विचार करने का दायित्व सरकार के उस दायित्व से भिन्न है जिसके द्वारा निरूद्ध व्यक्ति का मामला अभ्यावेदन के साथ सलाहकार बोर्ड की राय प्राप्त करने हेतु संदर्भित किया जाता है। [110 बी-सी]

4 (ख) सरकार अभ्यावेदन पर विचार करने के अपने कर्तव्य का निर्वहन करते हुए ऐसे अभ्यावेदन पर बोर्ड के विचारों पर निर्भर नहीं हो सकती है। बोर्ड के ऐसे किसी दृष्टिकोण से प्रभावित हुए बिना उसे अपने दम पर अभ्यावेदन पर विचार करना होगा। अभ्यावेदन पर विचार करने पर सरकार का दायित्व संदर्भ की सुनवाई के समय अभ्यावेदन पर विचार

करने के बोर्ड के दायित्व से अलग है। वास्तव मे सरकार को अभ्यावेदन पर इस दि्ष्ट से विचार करना है कि क्या आदेश कानून द्वारा प्रदत शक्ति के अनुरूप है। [110 सी-डी]

4 (ग) दूसरी ओर बोर्ड अभ्यावेदन पर विचार करता है तब उसका उद्देश्य होता कि क्या निरोध के लिए पर्याप्त मामला है। बोर्ड द्वारा किया गया विचार अतिरिक्त सुरक्षा उपाय है न कि सरकार द्वारा अभ्यावेदन के विचार के लिये एक विकल्प है। [110 ई]

4 (घ) अभ्यावेदन पर सरकार द्वारा विचार किए जाने का अधिकार अनुच्छेद 22 (5) द्वारा सुरक्षित किया गया है, और यह अधिकार सलाहकार बोर्ड द्वारा निरूद्ध व्यक्ति के मामले व उसके अभ्यावेदन पर अनुच्छेद 22 के खंड (4) सपठित विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी गतिविधियों की रोकथाम अधिनियम, 1974 की धारा 8 (सी) के तहत विचार करने के अधिकार से भिन्न है। [110 एफ]

एस. के. अब्दुल करीम और ओआरएस। वी. पश्चिम बंगाल राज्य, [1969] 1 एस. सी. सी. 433 ; पंकज कुमार चक्रवर्ती और अन्य। वी. पश्चिम बंगाल राज्य, [1970] 1 एस. सी. आर. 543; श्यामल चक्रवर्ती बनाम पुलिस आयुक्त कलकत्ता और अन्य, [1969] 2 एस. सी. सी. 426; बी. सुंदर राव और अन्य, वी. उड़ीसा राज्य, [1972] 3 एस. सी. सी. 11; जॉन मार्टिन बनाम। पश्चिम बंगाल राज्य, [1975] 3 एससीआर 211; एस.

के. सेकावत बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1983] 2 एस. सी. आर. 161 और हरधन साहा और अन्य वी. पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य।, [1975] 1 एस. सी. आर. 778, संदर्भित।

5 (क) अभ्यावेदन व्यक्ति की स्वतंत्रता से संबंधित है, हमारे संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित अत्यधिक पोषित अधिकार है। इसलिए अनुच्छेद 22 (5) सरकार पर कानूनी दायित्व डालता है कि वह अभ्यावेदन पर जल्द से जल्द विचार करे। यह एक संवैधानिक अधिदेश है जो संबंधित प्राधिकारी को निर्देश देता है कि हिरासत में लिये गए व्यक्ति के अभ्यावेदन पर विचार करे और यथासंभव शीघ्रता से निपटारा करे। [110 एच; 111 ए]

5 (ख) अनुच्छेद 22 (5) में आने वाले शब्द "जितनी जल्दी हो सके" निर्माताओं की इस चिंता को दर्शाता है कि अभ्यावेदन पर शीघ्रता से विचार किया जाना चाहिए और बिना किसी टालने योग्य देरी के तात्कालिकता की भावना के साथ निपटाया जाना चाहिए। हालाँकि, इस संबंध में कोई कठोर और तेज़ नियम नहीं हो सकता है, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। संविधान के तहत या संबंधित निरोध कानून के तहत कोई अवधि निर्धारित नहीं है, जिसके भीतर अभ्यावेदन को निपटाया जाना चाहिए, हालांकि इसके लिए आवश्यकता यह है कि अभ्यावेदन पर विचार करने में लापरवाही या कठोर रवैया नहीं होना चाहिए। अभ्यावेदन के निपटारे में कोई भी अस्पष्टीकृत देरी

संवैधानिक अनिवार्यता का उल्लंघन होगी और यह निरंतर निरोध को अस्वीकार्य और अवैध बना देगा। [111 बी-डी]

जयनारायण सुकुल बनाम पश्चिम बंगाल राज्य, [1970] 1 एस. सी. सी. 219; फ्रांसेस कोरली मुलिन बनाम। डब्ल्यू. सी. खम्ब्रा और ओआरएस।, [1980] 2 एस. सी. सी. 275; राम धोंडू बोराडे बनाम। वी. के. सराफ, पुलिस आयुक्त और अन्य।, [1989] 3 एस. सी. सी. 173; और असलम अहमद ज़हिरे अहमद शेखव। उहियन ऑफ इंडिया एंड ओआरएस।, [1989] 3 एस. सी. सी. 277, संदर्भित।

6 (क) अनुच्छेद 22 (5) के तहत ऐसा कोई संवैधानिक अधिदेश अथवा वैधानिक आवश्यकता नहीं है। जब तक कि सरकार बिना किसी देरी के अभ्यावेदन पर निष्पक्ष दिमाग से विचार करती है, तब तक यह निष्कर्ष निकालना निराधार होगा कि स्वतंत्र विचार का अभाव रहेगा यदि निरोध आदेश की पुष्टि से पूर्व अभ्यावेदन पर विचार नहीं किया है। वास्तव में सरकार की शक्तियों पर यह प्रतिबंध लगाने का कोई औचित्य नहीं है। [115 सी "डी"}

6 (ख) अनुच्छेद 22 (5) से पता चलता है कि निरोध के आदेश की पुष्टि के बाद भी अभ्यावेदन प्राप्त किया जा सकता है। अनुच्छेद 22 (5) में "उसे आदेश के खिलाफ अभ्यावेदन करने का जल्द से जल्द अवसर प्रदान करेगा" शब्दों से पता चलता है कि सरकार का दायित्व बंदी को आदेश की

पुष्टि होने से पहले उसके खिलाफ अभ्यावेदन करने का अवसर प्रदान करना है। अधिनियम की धारा 8 के तहत निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार यदि बंदी उस स्तर पर अभ्यावेदन करने के अपने अधिकार का प्रयोग नहीं करता है, लेकिन सरकार द्वारा निरोध के आदेश की पुष्टि करने के बाद इसे सरकार के समक्ष प्रस्तुत करता है, तो सरकार को अभी भी इस तरह के अभ्यावेदन पर विचार करना होगा और यदि निरोध क़ानून के तहत प्रदत्त शक्ति के भीतर नहीं है तो बंदी को रिहा करना होगा। निरोध आदेश की पुष्टि बंदी के खिलाफ निर्णायक नहीं है। इसे धारा 11 के तहत या बंदी के अभ्यावेदन पर स्वतः संज्ञान लेते हुए रद्द किया जा सकता है। [116 ए-बी]

6 (ग) जब तक कि अभ्यावेदन पर सरकार द्वारा स्वतंत्र रूप से विचार किया जाता है और यदि अभ्यावेदन पर विचार करने में कोई देरी नहीं होती है, यह तथ्य कि निरोध की पुष्टि के बाद इस पर विचार किया जाता है, निरोध की वैधता या निरोध की पुष्टि पर बहुत कम अंतर लाता है। पुष्टि को केवल इस आधार पर अमान्य नहीं किया जा सकता है कि अभ्यावेदन पर पुष्टि के पश्चात विचार किया गया हो [116 सी-डी]

वी. जे. जैन बनाम श्री प्रधान और अन्य।, [1979] 4 एस. सी. सी. 401; ओम प्रकाश बहल बनाम भारत संघ और अन्य, 1979 का डब्ल्यू. पी. सं. 845 तय किया गया 15.10.1979 और खैरुल हक बनाम। पश्चिम बंगाल राज्य, डब्ल्यू. पी. संख्या 246/69 10.9.1969 पर निर्णय लिया,

शासन किया; खुदीराम दास बनाम। पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य।, [1975] 2 एस. सी. सी 81, विशिष्ट

आपराधिक अपील न्यायनिर्णयः रिट याचिका (सीआरएल.) सं. 508/1989 आदि।

(भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत)

हरजिंदर सिंह, आर. एन. जोशी, ए. आचार्य, नवीन मल्होत्रा, जगन एम. राव और राजू रामचंद्रन याचिकाकर्ताओं के लिए

वी. सी. महाजन, बी. पार्थसारथी, पी. परमेस्वरन और एम. वीरप्पा उत्तरदाताओं के लिए

न्यायालय का निर्णय के. जगन्नाथ शेट्टी, जे. द्वारा पारित किया गया था।

न्यायालय की एक खंड पीठ के द्वारा यह विचार व्यक्त किया गया कि जे. वी. जैन बनाम. श्री. प्रधान और ओआरएस, [1979] 4 एस. सी. सी. 401 और ओम प्रकाश बहल बनाम भारत संघ और अन्य, 1979 की डब्ल्यू. पी. संख्या 845 ने 15.10.1979 (यू. एन. आर. ई.) के मामलो पर पुनः विचार की आवश्यकता है अतः इन मामलों को संविधान पीठ को भेज दिया है।

इस बिंदु पर उक्त दो मामलों में निर्धारित कानून का उल्लेख करना सुविधाजनक होगा। दोनों मामलों में व्यक्तियों को विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी गतिविधियों की रोकथाम अधिनियम, 1974 ('अधिनियम') के तहत हिरासत में लिया गया था। बंदी ने उपयुक्त सरकार के समक्ष अभ्यावेदन किया। तब तक सलाहकार मंडल का गठन पहले ही हो चुका था और हिरासत में लिए गए व्यक्ति के मामले पर विचार करने के लिए इसकी बैठक निर्धारित थी। सरकार ने हिरासत में लिए गए व्यक्ति के अभ्यावेदन को सलाहकार मंडल को भेज दिया। सलाहकार मंडल ने बंदी के मामले और प्रतिनिधि की नाराजगी पर भी विचार किया और यह राय व्यक्त करते हुए रिपोर्ट प्रस्तुत की कि व्यक्ति को हिरासत में लेने का पर्याप्त कारण था। सरकार ने उस रिपोर्ट पर विचार करने के बाद हिरासत के आदेश की पुष्टि की। ऐसा प्रतीत होता है कि निरोध आदेश की पुष्टि करने से पहले बंदी के अभ्यावेदन पर विचार नहीं किया गया था और बाद में इस पर विचार किया जाकर खारिज कर दिया गया। वी. जे. जैन मामले में इस अदालत ने कहा है कि बंदी के अभ्यावेदन पर उसे हिरासत में लेने पर विचार किया जाना चाहिए। निरोध आदेश की पुष्टि करने वाला कोई भी आदेश दिए जाने से पहले जितनी जल्दी हो सके प्राधिकरण की सहमति के बिना निरोध आदेश की पुष्टि अमान्य होगी और अभ्यावेदन पर बाद में विचार करने से पुष्टि के आदेश की अयोग्यता ठीक नहीं होगी। ओम प्रकाश बहल मामले में अप्रकाशित फैसले में इस विचार को दोहराया गया है।

वर्तमान मामले के प्रासंगिक तथ्यों का अब वर्णन किया जा सकता हैः दिनांक 1 दिसंबर, 1988 में को राजस्व निदेशालय के अधिकारियों ने यह सूचना मिलने पर कि के. एम. अब्दुल्ला कुन्ही द्वारा कब्जा किए गए कमरे में प्रतिबंधित सोना छिपा दिया गया है, स्वतंत्र गवाहों की उपस्थिति में कमरे की तलाशी ली। एक मोहम्मद अली नाम का व्यक्ति भी कमरे के अंदर मौजूद था, अधिकारियों ने एक सैमसोनाइट पाउच और उस कमरे में टेबल दराज़ से Rs.34,800 की भारतीय मुद्रा के कुछ बंडल बरामद किए और उक्त पाउच के अंदर 24 कैरेट के विदेशी मूल के पांच सोने के बिस्कुट थे। जिसे अधिकारियों ने वजह सबूत जब्त किया। 24 फरवरी 1989 को, राज्य सरकार ने अधिनियम की धारा 3 (1) (iv) के तहत हिरासत के दो अलग-अलग आदेश पारित किए, जिनमें समान याचिकाकर्ता के. एम. अब्दुल्ला कुन्ही को हिरासत में लेने का निर्देश दिया गया। डब्ल्यू. पी. (सीआरएल।)508\1989 तथा एस. एल. पी. (सी. आर. एल.) 2009 और डब्ल्यू. पी. तथा बी. एल. मोहम्मद अली जो कि (सीआरएल) 542\1989 और एसएलपी (सी. आर. एल.) क्रमांक सं. 2117\1989 में समान याचिकाकर्ता था। दिनांक 9 मार्च 1989 को मोहम्मद अली को हिरासत में ले लिया गया। उन दोनों को बैंगलोर की केंद्रीय जेल में रखा गया था। दिनांक 17 अप्रैल, 1989 को बंदियों ने सरकार को अभ्यावेदन दिया। उक्त अभ्यावेदनों पर तुरंत विचार नहीं किया जा सका क्योंकि उन्हें विभिन्न अधिकारियों से जानकारी और टिप्पणियों के अनुवाद और संग्रह की

आवश्यकता थी। इसी बीच, मामले को सलाहकार मंडल को भेज दिया गया जिसकी बैठक 20 अप्रैल 1989 को हुई थी। बोर्ड ने बंदी के मामले पर विचार किया और बताया कि बंदी के अभ्यावेदन पर विचार करने में उनकी अस्पष्टीकृत देरी का पर्याप्त कारण था। वास्तव में, याचिकाकर्ताओं के वकील ने बहुत निष्पक्षता से कहा कि वे देरी का सवाल नहीं उठा रहे हैं। उन्होंने यह भी तर्क नहीं दिया कि हिरासत की पुष्टि के बाद अभ्यावेदन की अस्वीकृति एक स्वतंत्र विचार नहीं था।

दो संवैधानिक सुरक्षा उपाय हैंः अनुच्छेद 22 (4) तथा अनुच्छेद 22(5) अनुच्छेद 22 (4) के तहत यदि किसी निरुद्ध व्यक्ति को तीन महीने से अधिक समय तक हिरासत में रखे जाने योग्य माना जाता है, तो उसका मामला सलाहकार बोर्ड को भेजा जाएगा।तीन महीने की उक्त अवधि की समाप्ति से पूर्व बोर्ड को रिपोर्ट करनी होगी कि उसकी राय में ऐसे निरोध के लिए पर्याप्त कारण है। जब किसी व्यक्ति को अन्य किसी निवारक निरोध कानून के तहत पारित किए गए आदेश के अनुसरण में हिरासत में लिया जाता है, तो जितना जल्दी हो सके प्राधिकारी उसे आदेश पारित करने के आधारों को अवगत करायेगा तथा अविलंब उसे आदेश के खिलाफ अभ्यावेदन प्रस्तुत करने का अवसर प्रदान करेगा।

बंदी के अनुच्छेद 22 (5) के तहत दो अधिकार हैं। (i) बंदी को जितनी जल्दी हो सके, उन आधारों के बारे में सूचित किया जायेगा जिन

पर निरोध का आदेश आधारित है, यानी वे आधार जिससे निरोध प्राधिकारी को व्यक्तिपरक संतुष्टि मिली, और (ii) बंदी को निरोध के आदेश के खिलाफ अभ्यावेदन प्रस्तुत करने का जल्द से जल्द अवसर उपलब्ध करवाया जायेगा।

निरोध आदेश के संबंध में वैधानिक सुरक्षा उपाय भी हैं संवैधानिक आवश्यकताओं के अनुरूप अधिनियम के तहत व्यक्ति अधिनियम की धारा 3 निरोध आदेश देने की शक्ति प्रदान करती है। उप. धारा (1) उन अधिकारियों की बात करती है जो हिरासत में लेने के लिए तथा निरोध आदेश देने के लिये सक्षम हैं। उप-धारा (2) में कहा गया है कि जब निरोध आदेश राज्य सरकार द्वारा या राज्य सरकार के अधिक्रत अधिकारी द्वारा दिया जाता है तब राज्य सरकार, दस दिनों के भीतर, केंद्र सरकार के समक्ष अउस आदेश के संबंध में एक रिपोर्ट प्रेषित करेगी। उप- धारा (3) एक प्रावधान के तहत हिरासत निरूद्ध व्यक्ति को निरोध आदेश के संबंध में आदेश के आधारों की जानकारी दी जाने का प्रावधान किया गया है। उक्त जानकारी निरोध के अधिकतम पांच दिन के भीतर दी जायेगी लेकिन असाधारण परिस्थितियों में और लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए, निरोध की तारीख से अधिकतम प्रंदह दिन तक आदेश के आधारों की सूचना दी जा सकती है।

अधिनियम की धारा 8 के तहत बंदी के मामले को सलाहकार बोर्ड को संदर्भित करने का प्रावधान है। उक्त बोर्ड के अध्यक्ष और सदस्य अनुच्छेद 22 (4)(क) के तहत निर्धारित योग्यताधारी होंगे। साथ ही उनमें उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हेतु निर्धारित योग्यताएं भी होंगी। धारा 8 (ख) में सरकार का यह दायित्व होगा कि बंदी के मामले को निरोध की दिनांक से पांच सप्ताह के भीतर सलाहकार बोर्ड को संदर्भित करे। धारा 8 (ग) में बोर्ड द्वारा समस्त सामग्री पर विचार कर तथा निरूद्ध व्यक्ति को सुनकर, इस आशय की रिपोर्ट दी जायेगी की उक्त बंदी के निरोध का पर्याप्त कारण है या नहीं। बोर्ड निरोध की दिनांक से 11 सप्ताह के भीतर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा। धारा 8(छ) के तहत प्रत्येक मामला जिसमें सलाहकार बोर्ड निरोध का पर्याप्त कारण होने की राय देता, वहां सरकार निरोध आदेश को पुष्ट कर सकती है और निरोध को तब तक निरंतर कर सकती है तथा अधिनियम के तहत निर्धारित अनुज्ञय अधिकतम अवधि तक उचित हो तो बढा सकती है। जहां सलाहकार बोर्ड द्वारा निरोध का कोई पर्याप्त कारण नहीं होने की रिपोर्ट दी जाती है ऐसे सभी मामलों में सरकार निरोध आदेश को रद्द कर देगी और तुरंत ही बंदी को रिहा कर देगी। अवश्य ही यह प्रावधान धारा 9 के अधीन रहेगा जिसकी अभी आवश्यकता नहीं है।

धारा 10 अधिकतम अवधि निर्धारित करती है जिसके लिए किसी भी व्यक्ति को हिरासत में लिया जा सकता है। धारा 11 राज्य सरकार या केंद्र

सरकार को बिना किसी रोक-टोक के निरोध आदेश को रद्द करने की शक्ति प्रदान करती है जो कि सामान्य खंड अधिनियम की धारा 21 के प्रावधानों को पूर्वाग्रहित नहीं करेगी। यह निरसन उसी व्यक्ति के खिलाफ धारा 3 के तहत एक और निरोध आदेश देने पर रोक नहीं लगाएगा।

यह अब विवाद के दायरे से परे है कि अनुच्छेद 22 के खंड (5) के तहत अभ्यावेदन करने का संवैधानिक अधिकार आवश्यक निहितार्थ द्वारा अभ्यावेदन पर सम्यक रूप से विचार करने के संवैधानिक अधिकार की गारंटी देता है। दूसरा यह कि निरूद्ध व्यक्ति को अभ्यावेदन प्रस्तुत करने के लिये अवसर दिये जाने व अभ्यावेदन पर विचार करने बाबत सरकार का दायित्व, सरकार के उस दायित्व से अलग है जिससे निरूद्ध व्यक्ति का मामला मय अभ्यावेदन सलाहकार बोर्ड की राय एवं रिपोर्ट हेतु भेजा जाता है। अनुच्छेद 22 के खंड (4) और (5) में यह निहित है कि सरकार अपने कर्तव्य का निर्वहन करते हुए अभ्यावेदन पर विचार करेगी तथा बोर्ड के विचारों पर निर्भर नहीं करेगी। बोर्ड के ऐसे किसी भी दृष्टिकोण से प्रभावित हुए बिना उसे अपने दम पर अभ्यावेदन पर विचार करना होगा। अभ्यावेदन पर विचार करने का सरकार का दायित्व संदर्भों की सुनवाई के समय अभ्यावेदन पर विचार करने के बोर्ड के दायित्व से अलग है। सरकार अनिवार्य रूप से यह पता लगाने के लिए अभ्यावेदन पर विचार करती है कि क्या आदेश कानून द्वारा प्रदत्त शक्ति के अनुरूप है। दूसरी ओर, बोर्ड हिरासत में लिए गए व्यक्ति के अभ्यावेदन और मामले पर विचार करता है

ताकि यह जांच की जा सके कि क्या हिरासत के लिए पर्याप्त मामला है। बोर्ड द्वारा विचार एक अतिरिक्त सुरक्षा है और सरकार द्वारा अभ्यावेदन असंतोष पर विचार करने का विकल्प नहीं है। सरकार द्वारा अभ्यावेदन पर विचार करने का अधिकार अनुच्छेद 22(5) के तहत सरंक्षित है तथा यह अधिकार सलाहकार बोर्ड द्वारा बंदी के मामले पर विचार करने से भिन्न है। 22 (4) सपठित अधिनियम की धारा 8 (ग) (देखिएः एस. के. अब्दुल करीम और ओआरएस वी. पश्चिम बंगाल राज्य, [1969] 1 एस. सी. सी. 433; पंकज कुमार चक्रवर्ती और अन्य वी. पश्चिम बंगाल राज्य, [1970] 1 एस. सी. आर. 543; श्यामल चक्रवर्ती बनाम। पुलिस आयुक्त कलकत्ता और अन्र।, [1969] 2 एससीसी। 426 ; बी. सुंदर राव और अन्य। वी. उड़ीसा राज्य, [1972] 3 एस. सी. सी. 11; जॉन मेट्रिन बनाम। पश्चिम बंगाल राज्य, [1975] 3 एससीआर 211; एस. के. सेकावत बनाम। पश्चिम बंगाल राज्य, [1983] 2 एस. सी. आर. 161 और हरधन साहा और अन्र, v. पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य।, [1975] 1 एससीआर 778।

अभ्यावेदन व्यक्ति की स्वतंत्रता से संबंधित होकर हमारे संविधान के अनुच्छेद 21 में निहित अत्यधिक पोषित अधिकार है। इसलिए अनुच्छेद 22 का खंड (5), पर जल्द से जल्द विचार करने के लिए सरकार पर कानूनी दायित्व डालता है। यह एक संवैधानिक अधिदेश है जो संबंधित प्राधिकारी को निर्देश देता है कि हिरासत में लिया गया व्यक्ति अभ्यावेदन पर विचार करने और यथासंभव शीघ्रता से निपटाने के लिए अपना प्रस्तुत

करता है। अनुच्छेद 22 के खंड (5) में आने वाले "जितनी जल्दी हो सके" शब्द निर्माताओं की इस चिंता को दर्शाते हैं कि अभ्यावेदन पर शीघ्रता से विचार किया जाना चाहिए और बिना किसी विलंब के तात्कालिकता की भावना के साथ निपटाया जाना चाहिए। हालाँकि, इस संबंध में कोई कठोर और तेज़ नियम नहीं हो सकता है, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। संविधान या संविधान के तहत कोई अवधि निर्धारित नहीं है। निश्चित निरोध कानून, जिसके भीतर अभ्यावेदन से निपटा जाना चाहिए। हालाँकि, आवश्यकता यह है कि अभ्यावेदन पर विचार करने में लापरवाही या कठोर रवैया नहीं होना चाहिए। अभ्यावेदन के निपटारे में कोई भी अस्पष्टीकृत देरी संवैधानिक अनिवार्यता का उल्लंघन होगी और यह निरंतर निरोध को अस्वीकार्य और अवैध बना देगा। इस न्यायालय के कई निर्णयों में इस पर जोर दिया गया है और इस पर फिर से जोर दिया गया है। (देखिएः जयनारायण सुकुल बनाम। पश्चिम बंगाल राज्य, [1970] 1 एस. सी. सी. 219; फ्रांसेस कोरली मुलिन बनाम। डब्ल्यू. सी. खम्ब्रा और अन्य।, [1980] 2 एस. सी. सी. 275; राम धोंडू बोराडे बनाम। वी. के. सराफ, पुलिस आयुक्त और अन्य [1989] 3 एस. सी. सी. 173 और असलम अहमद ज़हीर अहमद शेख बनाम। भारत संघ और ओआरएस।, [1989] 3 एससीसी 277।

जयनारायण सुकुल मामले में, ए. एन. रे, जज., द्वारा संवेधानिक पीठ की और से बोलते हुए चार सिद्धांत निर्धारित किए हैं जो बंदियों के अभ्यावेदन के विचार को नियंत्रित करते हैं (पृ 224):

> "पहला कि, उपयुक्त प्राधिकारी बंदी को अभ्यावेदन करने का अवसर प्रदान करने हेतु बाध्य है तथा जितनी जल्दी हो सके बंदी के अभ्यावेदन पर विचार करेंगा। दूसरा उपयुक्त प्राधिकारी द्वारा बंदी के अभ्यावेदन पर किया गया विचार सलाहकार बोर्ड द्वारा की गई किसी भी कार्रवाई से स्वतंत्र है। तीसरा, अभ्यावेदन पर विचार करने के मामले मे कोई देरी नहीं होनी चाहिए। यह सच है कि उपयुक्त प्राधिकारी द्वारा इस विचार के लिये गये समय के मापदण्ड के लिए कोई कठिन और तेज़ नहीं है परंतु यह भी याद रखा जावे कि नागरिकों के शासन में सरकार को समर्थन करना होगा। एक नागरिक के अधिकार को लेकर सरकार का भी परस्पर संबंधित दायित्व है। चौथा सरकार को अभ्यावेदन पर अपनी राय और निर्णय का प्रयोग बंदी के मामले व अभ्यावेदन को सलाहकार मंडल के समक्ष प्रेषित करने से पूर्व करना होगा। यदि उपयुक्त सरकार द्वारा बंदी को रिहा कर दिया जाता है तो सरकार मामले को परामर्श के लिए बोर्ड को न हीं भेजेगी

> परंतु यदि बन्दी को हिरा नहीं किया जाता है तो सरकार मामले के साथ बंदी का अभ्यावेदन सलाहकार मंडल को प्रेषित करेगी। तत्पश्चात यदि सलाहकार बोर्ड द्वारा बंदी की रिहाई बाबत राय व्यक्ति की जाती है तो सरकार उक्त बंदी को रिहा करेगी। यदि सलाहकार बोर्ड द्वारा बंदी के रिहाई के खिलाफ भी कोई राय व्यक्त की जाती है तो भी बंदी को रिहा करने की शक्ति का प्रयोग कर सकती है।''

फ्रांसेस कोरली मुलिन बनाम डब्ल्यू. सी. खम्ब्रा और अन्य मे चिन ए. रेड्डी, जे., द्वारा अभ्यावेदन के विचार के लिए अनिवार्य समय के संबंध में (279 पर) जोर दिया हैः

> "हालाँकि, हम जल्दबाजी में यह जोड़ते हैं कि समय की अनिवार्यता कभी भी निरकुंश या जुनुनी नहीं हो सकती। अदालत की टिप्पणियाँ को इस आशय में सही समझा जावे। आवश्यकताओं के आधार पर छूटी देनी होगी। (हम यहां 'परिस्थितियाँ' का शब्द का उपयोग में नहीं ले रहे)। सलाहकार बोर्ड द्वारा रिपोर्ट करने से पूर्व कल्पना करे कि बोर्ड बंदी द्वारा कोई अभ्यावेदन प्रस्तुत नहीं किया जाता है तो ऐसी स्थिति में बंदी निरोध प्राधिकारी के लिये असंभव होगा कि वह उस पर विचार करे या बोर्ड की राय प्राप्त करने

> हेतु प्रेषित करे या ऐसा भी मामला हो सकता है कि बंदी जब तक अपना अभ्यावेदन निरोध प्राधिकारी के समक्ष पेश करे और सलाहकार बोर्ड को मामला प्रेषित करने से पहले प्राधिकारी को उस पर विचार करने का समय ही न मिले और उस अभ्यावेदन को बिना विचार ही बोर्ड को प्रेषित करना पडे। ऐसी कई परिस्थितियाँ उत्पन्न हो सकती है जो समय की अनिवार्यता को नहीं मानने हेतु बाध्य करे। परंतु सुस्ती एवं उदासीनता के लिए समय की अनुमति नहीं दी जा सकती है न ही टालमटोल की अनुमति दी जा सकती। निश्चित रूप से आवश्यक परामर्श के लिए समय दिया जा सकता है जहां कानूनी जटिलताएँ और तथ्यात्मक संशोधन शामिल हो। समय की अनिवार्यता की थोडी सी भी अपालना को स्पष्ट करने का भार निरोध प्राधिकारी का होगा"

फ्रांसेस कोरली मुलिन के मामले में बंदी का अभ्यावेदन 26 दिसंबर, 1979 को निरोधक प्राधिकारी को अभ्यावेदन की प्रति बिना किसी देरी प्राप्त हुआ के कस्टम अधिकारियों को उनकी टिप्पणियों के लिए प्रेषित की गई क्योंकि निरोध आदेश के संबंध में जानकारी उन्हीं के द्वारा एकत्र की गई थी। तथ्य निस्संदेह जटिल थे क्योंकि बंदी के खिलाफ आरोपों से डोप तस्करों के एक अंतर-राष्ट्रीय गिरोह के साथ संलिप्तता का पता चला था। कस्टम अधिकारियों की

टिप्पणियां 4 जनवरी, 1980 को प्राप्त हुईं। सलाहकार बोर्ड की बैठक 4 जनवरी, 1980 को हो रही थी और इसलिए हिरासत में लिए गए लोगों के अभ्यावेदन पर निरोधक प्राधिकारी का विचार किये जाने का कोई सवाल ही नहीं हो सकता था बोर्ड से पहले जब तक कि यह एक बड़ी और अनुचित जल्दबाजी में नहीं किया गया था। कस्टम अधिकारियों की टिप्पणियां प्राप्त करने के बाद, कानूनी सलाह लेना आवश्यक पाया गया क्योंकि अभ्यावेदन ने कई कानूनी और संवैधानिक प्रश्न उठाए थे, इसलिए, सचिव (कानून और न्यायिक) दिल्ली प्रशासन के साथ परामर्श के बाद, अभ्यावेदन को अंततः 15 जनवरी, 1980 प्रशासक द्वारा खारिज कर दिया गया था। यह अभिनिर्धारित किया गया कि यदि कोई देरी होती प्रतीत होती है तो यह किसी भी सावधानी की कमी के कारण नहीं थी, बल्कि इसलिए कि अभ्यावेदन के लिए जांच एजेंसियों और कानून पर सलाहकारों के परामर्श से पूरी तरह से जांच की आवश्यकता थी।

हम फ्रांसेस कोरली मुलिन मामले में टिप्पणियों से सहमत हैं। अभ्यावेदन पर विचार करने के लिए अनिवार्य समय कभी भी निरंकुश या जुनूनी नहीं हो सकता है। यह आवश्यकताओं और अभ्यावेदन किए जाने के समय पर निर्भर करता है। मामला सलाहकार बोर्ड को भेजे जाने से पहले अभ्यावेदन प्राप्त किया जा सकता है, लेकिन मामले को सलाहकार बोर्ड को भेजने से पहले

अभ्यावेदन को निपटाने का समय नहीं हो सकता है। उस स्थिति में अभ्यावेदन को निरूद्ध व्यक्ति के मामले के साथ सलाहकार बोर्ड को भी भेजा जाना चाहिए। मामले को सलाहकार बोर्ड को संदर्भित करने के पश्चचात भी अभ्यावेदन प्राप्त किया जा सकता है। दोनो ही स्थिति में अभ्यावेदन को सलाहकार बोर्ड को भेजा जाना चाहिए बशर्ते बोर्ड ने कार्यवाही को समाप्त नहीं किया हो। दोनों स्थितियों में सलाहकार बोर्ड की रिपोर्ट प्राप्त करने से पहले अभ्यावेदन पर विचार करने का कोई सवाल ही नहीं है। न ही यह कहा जा सकता है कि सरकार ने बोर्ड की रिपोर्ट का अनावश्यक रूप से इंतजार करते हुए अभ्यावेदन पर विचार करने में देरी की है। ऐसी स्थितियों में सरकार के लिए बोर्ड की रिपोर्ट का इंतजार करना उचित है। यदि बोर्ड गुण-दोष के आधार पर निरोध के लिए कोई सामग्री नहीं पाता है और तदनुसार रिपोर्ट करता है, तो सरकार निरोध के आदेश को रद्द करने के लिए बाध्य है। दूसरा, भले ही बोर्ड यह विचार व्यक्त करता है कि हिरासत के लिए पर्याप्त कारण है, सरकार अभ्यावेदन पर विचार करने के बाद भी हिरासत को रद्द भी कर सकती है। बोर्ड को निरोध की तारीख से ग्यारह सप्ताह के भीतर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करनी होगीः सलाहकार मंडल बंदी को उसके अनुरोध पर सुन सकता है। बोर्ड के संविधान से पता चलता है कि इसमें ऐसे प्रतिष्ठित व्यक्ति शामिल हैं जो उच्च न्यायालय में न्यायाधीश नियुक्त

होने के लिए अर्हित हैं। इसलिए यह उचित है कि सरकार बोर्ड की रिपोर्ट प्राप्त होने के बाद ही उपरोक्त दो स्थितियों में अभ्यावेदन पर विचार करे। यदि सलाहकार बोर्ड द्वारा अपनी रिपोर्ट देने के बाद सरकार को अभ्यावेदन प्राप्त होता है, तो निश्चित रूप से सलाहकार बोर्ड को अभ्यावेदन भेजने का कोई सवाल ही नहीं हो सकता है। सरकार को जल्द से जल्द इसे सुलझाना होगा और इसका निपटारा करना होगा।

विचार के लिए महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या सरकार को निरोध की पुष्टि करने से पहले अभ्यावेदन पर विचार करना चाहिए और उसका निपटारा करना चाहिए। इस न्यायालय ने वी. जे. जैन मामले में (405 पर) यह माना है कि अनुच्छेद 22 के खंड (5) के तहत यह एक संवैधानिक दायित्व है कि निरोध आदेश की पुष्टि करने से पहले अभ्यावेदन पर विचार किया जाए। यदि इस पर विचार नहीं किया जाता है, तो पुष्टि अमान्य हो जाती है और बाद में अभ्यावेदन का विचार करने एवं अभ्यावेदन को निरस्त करने पर भी आदेश की अयोग्यता को ठीक नहीं किया जा सकेगा। इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए, न्यायालय ने इस न्यायालय के पहले के दो निर्णयों पर भरोसा किया हैः (i) खुदीराम दास बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य, [1975] 2 एस. सी. सी. 81 और (ii) खैरुल हक बनाम। पश्चिम बंगाल राज्य, डब्ल्यू. पी. सं. 246/69 ने 10.9.1969 (अनरिपोर्टेड) पर निर्णय लिया।

खुदीराम मामले में निर्णय से राजकुमार को वी. जे. जैन के मामले में प्रतिपादित सिद्धांत को बहुत कम सहायता मिलेगी। खुदीराम के मामले में विचार करने बाबत कोई स्वीकार्य स्पष्टीकरण नहीं दिया गया था। हालाँकि, खैरुल हक मामले में निर्णय प्रासंगिक है। यह गैर-सूचित निर्णय भी है। मामले के तथ्यों और उसमें बताए गए सिद्धांतों को प्रस्तुत किया जा सकता है। वहां याचिकाकर्ता को निवारक निरोध अधिनियम, 1950 की धारा 3 (2) के तहत जिला मजिस्ट्रेट, 24 परगना, पश्चिम बंगाल के 5 जून 1969 के एक आदेश द्वारा हिरासत में लिया गया था। उन्हें 6 जून 1969 को दम दम केंद्रीय जेल में गिरफ्तार किया गया और हिरासत में लिया गया। जिला मजिस्ट्रेट ने 9 जून 1969 को अपने उक्त आदेश के बारे में राज्य सरकार को सूचित किया। 14 जून 1969 को राज्यपाल ने अपनी मंजूरी दी और केंद्र सरकार को मामले की सूचना दी। 23 जून, 1969 को या उसके आसपास सरकार को याचिकाकर्ता का अभ्यावेदन प्राप्त हुआ। 30 जून 1969 को राज्यपाल ने याचिकाकर्ता के मामले को सलाहकार बोर्ड को भेज दिया। सलाहकार बोर्ड ने 11 अगस्त 1969 को इस आशय की अपनी

रिपोर्ट दी कि याचिकाकर्ता को हिरासत में लेने का पर्याप्त कारण था। इसके बाद, 12 अगस्त 1969 को राज्यपाल ने हिरासत के आदेश की पुष्टि की। 29 अगस्त 1969 को राज्यपाल ने याचिकाकर्ता के अभ्यावेदन को खारिज कर दिया। न्यायालय ने इन तथ्यों का उल्लेख करते हुए कहा कि अभ्यावेदन पर विचार करने में दो महीने से अधिक देरी का कोई स्पष्टीकरण नहीं था। निस्संदेह ही केवल देरी के आधार पर हिरासत अमान्य हो जाएगी तथा न्यायालय इस आधार पर निरोध आदेश रद्द कर सकता है। लेकिन न्यायालय ने, हालांकि, कहा कि यह संदेहपूर्ण है कि क्या अभ्यावेदन पर सरकार का विचार अनुच्छेद 22 (5) की भाषा में निहित अनुसार स्वतंत्र था। यदि जिला मजिस्ट्रेटों के आदेश की सरकार द्वारा पुष्टि पहले की जाती है और सरकार उसके बाद अभ्यावेदन को निरस्त कर देती है, इस तरह की अस्वीकृति एक स्वतंत्र विचार नहीं है, बल्कि निरोध के आदेश की पुष्टि करने के अपने निर्णय के परिणामस्वरूप है। यह भी देखा गया कि निर्णय लेने की प्रक्रिया दूसरी तरह से होनी चाहिए, अर्थात, सरकार को पहले अभ्यावेदन पर विचार करना चाहिए और बाद में ही यह तय करना चाहिए कि उसे सलाहकार बोर्ड की रिपोर्ट के आधार पर जिला मजिस्ट्रेट के आदेश की पुष्टि करनी चाहिए या नहीं। खैरुल हक मामले में निर्णय को वी. जे. जैन मामले में माना गया है, जिसे बाद में ओम प्रकाश बहल मामले में माना गया था।

अनुच्छेद 22 खण्ड (5) के तहत ऐसा कोई सवैंधानिक आज्ञापक नहीं न ही ऐसी कोई वेधानिक आवश्यकता है कि अभ्यावेदन पर निरोध आदेश की पुष्टि से पहले विचार किया जाये। जब तक सरकार बिना किसी देरी के पर निष्पक्ष दिमाग से विचार करती है, तब तक इस निष्कर्ष पर पहुंचने का कोई आधार नहीं है कि यदि निरोध की पुष्टि से पहले अभ्यावेदन पर विचार नहीं किया जाता है तो इसका परिणाम यह होगा कि अभ्यावेदन पर स्वतंत्र रूप से विचार नहीं किया गया था। वास्तव में, सरकार की शक्तियों पर यह प्रतिबंध लगाने का कोई औचित्य नहीं है। जैसा कि पहले देखा गया है, अभ्यावेदन पर सरकार का विचार एक अलग उद्देश्य के लिए है, अर्थात् यह पता लगाने के लिए कि क्या निरोध क़ानून के तहत प्रदत्त शक्ति के अनुरूप है। इस बात को हरधन साहा मामले में समझाया गया है, जिसमें राय, मुख्य न्यायाधिपति ने संविधान पीठ की ओर से बोलते हुए कहा कि सरकार द्वारा अभ्यावेदन पर विचार केवल यह पता लगाने के लिए है कि क्या निरोध आदेश कानून के तहत प्रदत्त शक्ति के अनुरूप है। इस तरह के अभ्यावेदन के निस्तारण हेतु विस्तृत एवं तर्कसंगत आदेश पारित करने की आवश्यकता नहीं है। ऐसे आदेश के अभाव में भी न्याय की विफलता नहीं होगी। बस इतना ही आवश्यक है कि सरकार द्वारा वास्तविक और उचित विचार किया जाना चाहिए।

यह उल्लेख करना आवश्यक है कि न्यायालय नागरिकों की स्वतंत्रता को लेकर कानून के तथ्यों और आवश्यकताओं को सुरक्षित करता है, परंतु न्यायालय किसी प्राधिकारी के विरूद्ध बिना किसी सामग्री के उपधारणा नहीं कर सकता। यह ध्यान में रखा जावे कि निरोध की पुष्टि सरकार को अभ्यावेदन पर विचार करने पर निरोध के आदेश को रद्द करने से नहीं रोकती है। दूसरा, ऐसे मामले हो सकते हैं जहां सरकार को हिरासत की पुष्टि के बाद ही अभ्यावेदन पर विचार करना पड़ता है। अनुच्छेद 22 के खंड (5) से पता चलता है कि अभ्यावेदन आदेश की पुष्टि के बाद भी प्राप्त किया जा सकता है। अनुच्छेद 22 के खंड (5) में 'उसे आदेश के खिलाफ अभ्यावेदन करने का जल्द से जल्द अवसर प्रदान करेगा' शब्दों का तात्पर्य है कि सरकार का दायित्व अधिनियम की धारा 8 के तहत निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार पुष्टि होने से पहले बंदी को आदेश के खिलाफ अभ्यावेदन करने का अवसर प्रदान करना है। लेकिन यदि बंदी उस स्तर पर अभ्यावेदन करने के अपने अधिकार का प्रयोग नहीं करता है, लेकिन सरकार द्वारा निरोध के आदेश की पुष्टि करने के बाद अभ्यावेदन को सरकार के समक्ष प्रस्तुत करता है, तो सरकार को अभी भी इस तरह के अभ्यावेदन पर विचार करना होगा और यदि निरोध क़ानून के तहत प्रदत्त शक्ति के भीतर नहीं है तो बंदी को रिहा करना होगा। निरोध आदेश की पुष्टि बंदी के खिलाफ निर्णायक नहीं है। इसे धारा 11 के तहत या बंदी के अभ्यावेदन पर स्वतः संज्ञान लेते हुए रद्द किया जा सकता है। इसलिए हमें

ऐसा लगता है कि जब तक अभ्यावेदन पर सरकार द्वारा स्वतंत्र रूप से विचार किया जाता है और यदि अभ्यावेदन पर विचार करने में कोई देरी नहीं होती है, तब तक इस तथ्य से कि निरोध की पुष्टि के बाद इस पर विचार किया जाता है, निरोध की वैधता या पुष्टि पर बहुत कम फर्क पड़ता है। पुष्टि को केवल इस आधार पर अमान्य नहीं किया जा सकता है कि हिरासत की पुष्टि के बाद अभ्यावेदन को दरकिनार कर दिया गया है। न ही यह माना जा सकता है कि इस तरह का विचार एक स्वतंत्र विचार नहीं है। पूरे सम्मान के साथ, हम वी. जे. जैन, ओम प्रकाश बहल और खैरुल हक मामलों में व्यक्त किए गए विचारों को स्वीकार करने के लिए इच्छुक नहीं हैं। इन्हें अच्छा कानून नहीं माना जा सकता है और इसलिए इन्हें खारिज कर दिया जाता है।

हालाँकि, वकील ने कथन किया कि बंदी के अभ्यावेदन को विचार के लिए सलाहकार मंडल के पास नहीं भेजा गया था। यह प्रश्न उच्च न्यायालय के समक्ष नहीं उठाया गया था, न ही हमारे समक्ष रिट याचिकाओं में उठाया गया है अतः खारिज कर जाता।

इन याचिकाओं को अब अंतिम निस्तारण हेतु खंड पीठ के समक्ष रखा जाएगा।

याचिकाएं निस्तारित।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी दमयंती पुरोहित (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।